Volume: 4 Issue: 9 Pages: 71-73

भारतीय ज्ञान परम्परा में दर्शन, साहित्य और संस्कृति का प्रदेय

[*1] डॉ. भरत सिंह

[*1] सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश, भारत।

Article Info.
E-ISSN: 2583-6528
Impact Factor (SJIF): 6.876
Peer Reviewed Journal
Available online:
www.alladvancejournal.com

Received: 14/Aug/2025
Accepted: 13/Sep/2025

***Corresponding Author**
डॉ. भरत सिंह
सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश, भारत।

सारांश:
भारतीय ज्ञान परम्परा के आलोक में दर्शन, साहित्य और संस्कृति का गहरा प्रभाव परिलक्षित होता है। वास्तव में भारतीय ज्ञान परम्परा एक समृद्ध और व्यापक प्रणाली है जिसने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को एक नई दिशा देने का कार्य किया है। यदि बात दर्शन की करें तो इसमें न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा तथा वैदिक आदि एक प्राचीन और व्यापक प्रणाली है जो विविध दार्शनिक दृष्टिकोण और ज्ञान को विवेचित करता है । वहीं दूसरी ओर साहित्य एवं संस्कृति दोनों ही भारतीय ज्ञान परम्परा में अपनी महनीय भूमिका का निर्वहन करती है । साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है अतएव समाज में जो कुछ भी घटित होता है साहित्यकार उसे शब्दों में रूपायित कर उसकी विवेचना करता है । भारतीय साहित्य विशेषकर हिंदी भाषा और साहित्य वैदिक एवं लौकिक संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश और आधुनिक हिंदी भाषा और साहित्य की यात्रा करते हुए भारतीय ज्ञान परम्परा को अपने में समेटे हुए है । वास्तव में वेद और संस्कृत साहित्य भारतीय ज्ञान परम्परा के मेरुदण्ड हैं । इन्हीं की भावभूमि से भारतीय ज्ञान परम्परा, भारतीय संस्कृति के जीवन मूल्य, पंच महायज्ञ, षोड्स संस्कार, आयुर्वेद, चिकित्सा विज्ञान, शिक्षा पद्धति तथा व्यावहारिक ज्ञान प्रस्फुटित होता है जो भारतीय ज्ञान परम्परा को समृद्ध करता है । जबकि दूसरी ओर संस्कृति का सीधा सम्बन्ध जनसामान्य के लोकजीवन, लोक संस्कृति, परम्पराओं, रीति-रिवाजों और लोकाचार से होता है जिसके माध्यम से जनसामान्य की जीवन पद्धति का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है । अतएव कहा जा सकता है कि भारतीय ज्ञान परम्परा में भारतीय दर्शन, साहित्य और संस्कृति का योगदान महत्त्वपूर्ण है।

मुख्य शब्द: भारतीय ज्ञान परम्परा, दर्शन, साहित्य, संस्कृति, वेद, जीवन मूल्य

प्रस्तावना:

दर्शन, साहित्य और संस्कृति भारतीय ज्ञान परम्परा के मूलाधार हैं । इनका सम्यक अवलोकन करने से व्यावहारिक रूप से भारतीय ज्ञान परम्परा के दिग्दर्शन होते हैं । अतएव इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं है कि भारतीय ज्ञान परम्परा में दर्शन, साहित्य और संस्कृति की भूमिकाएँ अत्यंत महत्त्वपूर्ण और गहराई से जुड़ी हुई हैं। इन तीनों ने मिलकर न केवल भारतीय समाज की बौद्धिक और आध्यात्मिक संरचना को आकार दिया है, बल्कि विश्व स्तर पर भी अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है।

विषय विस्तार

1. भारतीय ज्ञान परम्परा में दर्शन का योगदान

भारतीय दर्शन का इतिहास हजारों वर्षों पुराना है और यह जीवन, ब्रह्मांड, आत्मा, मोक्ष, धर्म आदि विषयों पर गहन चिंतन प्रस्तुत करता है। वास्तव में भारतीय ज्ञान परम्परा के आधारभूत तत्वों में दर्शन ने अपनी महती भूमिका का निर्वहन किया है । भारतीय दर्शन के तीन पक्ष तत्त्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा और मूल्य मीमांसा के सतह-साथ तर्क मीमांसा को भी सम्मिलित किया गया है । पुरातन काल में गुरुकुल शिक्षा पद्धति ने भारतवर्ष के लोगों को 18 विधाओं, छः वेदांग, चार वेद, उपवेद, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गंधर्ववेद, शिल्पवेद मीमांसा तथा धर्मशास्त्र का ज्ञान प्राप्त कर गुरु के निर्देशन में ज्ञान अर्जित करते थे जो भारतीय दर्शन के आधारभूत स्तम्भ रहे हैं जिसके परिणामस्वरूप भारतीय ज्ञान परम्परा के दिग्दर्शन प्रस्फुटित होते हैं। भारतीय दर्शन की भावभूमि में मुख्य रूप से षड्दर्शन (छः प्रमुख दर्शन) सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा और वेदान्त आदि उल्लेखनीय हैं। इनका उद्देश्य सत्य की खोज, आत्मा और परमात्मा के संबंध की व्याख्या तथा मोक्ष की प्राप्ति के साधनों की विवेचना है। यदि सार रूप से कहें तो इनके माध्यम से भारतवर्ष के ज्ञान परम्परा का बोध होता है ।

भारतीय ज्ञान परम्परा के क्रम में बौद्ध एवं जैन दर्शन का प्रभाव स्पष्टतः से परिलक्षित होता है । बौद्ध और जैन दर्शन विशेष रूप से अहिंसा, करुणा और आत्मसंयम पर आधारित है । अतएव इन्होंने भारतीय जीवन दृष्टि को गहराई से प्रभावित किया तथा भारत की ज्ञान प्रणाली को सम्पूर्ण विश्व पर प्रचारित एवं प्रसारित करने का महनीय कार्य किया है ।

यदि सार रूप से कहा जाए तो भारतीय दर्शन गहन विश्लेष्णात्मक परम्परा का द्योतक है जो तर्क, प्रमाण, प्रत्यक्षा और अनुभूति के माध्यम से सत्य की खोज करवाता है । यह गहन विश्लेष्णात्मक परम्परा आध्यात्मिकता पर बल देती है जो विश्व को भौतिक जगत से परे आत्मिक उन्नति की ओर परिनिवृत्त करती है।

2. साहित्य का योगदान

भारतीय साहित्य का प्रारम्भ वैदिक संस्कृत से होता है । वैदिक साहित्य में भारतीय ज्ञान परम्परा के दिग्दर्शन होते हैं जसमें सिंधु घाटी सभ्यता से लेकर वैदिक संस्कृति, महाजनपद काल आदि में भारतीय संस्कृति के निमायक तत्त्व लोक धर्म, लोकाचार, लोकोत्सव आदि के माध्यम से ज्ञान, भावनाओं, मूल्यों और सांस्कृतिक आदर्शों को प्रसारित करने का कार्य किया है। इस प्रवाह के स्त्रोत वेद और उपनिषद ही हैं । वैदिक साहित्य की महत्ता को प्रमाणित करते हुए प्रो. सरोज शर्मा अपनी पुस्तक में लिखी हैं – "वेद की प्रभा से न केवल वेद स्वयं प्रकाशित होता है अपितु उसकी प्रभा से समस्त भारतीय वाङ्मय प्रकाशित होता है ।" [1] वेदों में जहाँ आचारशिक्षा, नीतिशास्त्र, आध्यात्म, दर्शन, मनोविज्ञान, आयुर्वेद आदि की दृष्टि से अनंत भण्डार विद्यमान है, वहीं काव्यशास्त्र की सृष्टि से भी विपुल सामग्री उपलब्ध है । वेद वस्तुतः दैवी काव्य हैं । इनमें काव्य के प्रायः सभी तत्व प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं ।" [2] वैदिक साहित्य के उपरांत भारतीय ज्ञान परम्परा के पोषक तत्वों में भारतवर्ष के दो महाकाव्य रामायण और महाभारत में भारतीय ज्ञान परम्परा के दिग्दर्शन होते हैं। ये केवल धार्मिक या साहित्यिक ग्रंथ नहीं हैं, बल्कि इनमें सामाजिक, नैतिक और राजनीतिक संरचनाओं का विश्लेषण अत्यंत सशक्त रूप में प्रस्तुत किया गया है। ये ग्रंथ राज्य, शासन, धर्म, न्याय और नैतिकता की गूढ़ अवधारणाओं को सामने लाते हैं, जो भारतीय राजनीतिक चिंतन की आधारशिला हैं।

इन दोनों महाकाव्यों में राजा को न केवल शासक, बल्कि धर्म और नीति का संरक्षक माना गया है। इस प्रकार रामायण और महाभारत भारतीय राजनीतिक दर्शन को धार्मिकता, नैतिकता, और लोकहित से जोड़ते हुए एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करते हैं, जो आज भी भारतीय राजनीति और प्रशासनिक आदर्शों की प्रेरणा बने हुए हैं। इसके अतिरिक्त काव्य और नाटक विशेषकर कालिदास, भास, भवभूति आदि रचनाकारों ने प्रेम, करुणा, वीरता और सौंदर्य के उच्चतम रूपों को साहित्य में पिरोया है जो कहीं-न-कहीं भारतीय ज्ञान परम्परा को उद्घाटित करते हैं।

वैदिक साहित्य के उपरांत हिंदी साहित्य के आदिकाल में भी भारतीय ज्ञान परम्परा का प्रकटीकरण सहज भाव से हुआ है । आदिकाल का धार्मिक साहित्य (सिद्ध, नाथ, जैन), लौकिक साहित्य और विशेषकर विद्यापति की पदावली में भक्ति भावना के साथ-साथ लोकतत्त्व घनीभूत हुआ है जिसके आलोक में भारतीय की ज्ञान प्रणाली मुखरित हुई है । वहीं दूसरी ओर भक्तिकाल को हिंदी साहित्य का स्वर्णकाल कहा जाता है जिसमें उत्तर भारत से लेकर दक्षिण भारत तक भक्ति की लौ जली। हिंदी साहित्य के सगुण एवं निर्गुण कवियों ने समाज सुधार, समाज दर्शन, लोकमंगल की भावना के साथ-साथ सामासिक संस्कृति को पुनः संगठित करने का महनीय कार्य किया जो भारतीय ज्ञान प्रणाली के नियामक तत्वों में से एक माने जाते हैं।

हिंदी साहित्य के रीतिकाल में भारतीय ज्ञान परम्परा के अंतर्गत लक्षण ग्रंथ लिखने की परम्परा, काव्य-कला का उत्कर्ष, आचार्यत्व की अवधारणा के साथ-साथ काव्यशास्त्रीय दृष्टिकोण एवं नीति, धर्म, निस्वार्थ प्रेम, समर्पण और हिंदी भाषा के साहित्यिक उन्मेष का काल रहा जिसमें भारतीय ज्ञान परम्परा का ज्ञान संचित है। वहीं हिंदी साहित्य के आधुनिक काल में राष्ट्र का पुनर्जागरण, नवजागरण, राष्ट्रीय चेतना, स्वदेशानुराग, हिंदी भाषा का परिष्कार, वेदांत दर्शन, कामाध्यात्म, शैव दर्शन सहित ऐसे अनेकों प्रवृतियाँ निहित हैं जिसमें भारतीय चिन्तन की समृद्ध परम्परा का विकास परिलक्षित होता है।

कुलमिलाकर कहा जाए तो भारतीय ज्ञान परम्परा में साहित्य का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण और व्यापक है। भारतीय साहित्य ने न केवल ज्ञान, दर्शन और संस्कृति के संरक्षण और प्रसार में योगदान दिया, बल्कि समाज, नैतिकता, धर्म और जीवनशैली को भी दिशा देने का कार्य किया है।

भाषा, कला और संस्कृति का संवर्धन

भारतीय ज्ञान परम्परा में साहित्य के साथ-साथ भाषाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है । भारत एक ऐतिहासिक देश रहा है जिसकी ज्ञान परम्परा उसके विविध भाषाओं के संयुक्त योगदान का परिणाम है । भारतीय ज्ञान परम्परा का मौलिक ज्ञान उसकी समृद्ध भाषाओं में सन्निहित है । भारतीय भाषाओं में न केवल साहित्यिक धरोहर अपितु वैज्ञानिक, तकनीकी और दार्शनिक ज्ञान भी समाहित है । समुचित रूप से कहा जाए तो भारतीय ज्ञान परम्परा में वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, आधुनिक आर्य भाषा के साथ-साथ द्रविड़ परिवार की भाषाएँ प्रमुख हैं जिन्होंने भारत की ज्ञान प्रणाली को साहित्य और लोक साहित्य के माध्यम से शिक्षित और अशिक्षित लोगों तक पहुँचाने का कार्य किया । भारतीय ज्ञान परम्परा का यह विविधतापूर्ण संगम सांस्कृतिक, धार्मिक और भौगोलिक परिप्रेक्ष्यों से उत्पन्न हुआ है । इसका परिणाम यह है कि एक अनुपम और ज्ञान का खजाना जो भारत को एक अद्वितीय सांस्कृतिक और भौगोलिक गहनता के साथ अलग करता है, क्योंकि भारतीय सभ्यत, संस्कृति और ज्ञान परम्परा की दृष्टि से अत्यंत प्राचीन है ।

प्राचीन काल से ही भारतीय सभ्यता में भाषाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है । वेदों उपनिषदों, पुराणों और अन्य ग्रन्थों में क्षेत्रीय भाषाओं का उल्लेख मिलता है, जो उसकी महत्ता का प्रमाणित करता है । संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, अवधी, ब्रज, तमिल, तेलगु, बंगला, कन्नड़, मलयालम, गुजरती, मराठी, उड़िया और असमिया जैसी भाषाएँ भारतीय सभ्यता और संस्कृति के विभिन्न पहलुओं को उजागर करती हैं ।

3. भारतीय ज्ञान परम्परा में संस्कृति का योगदान

संस्कृति को परिभाषित करते हुए लिखा गया है- "संस्कृति किसी एक समाज में पाई जाने वाली उच्चतम मूल्यों की वह चेतना है, जो सामाजिक प्रथाओं, व्यक्तियों की चित्तवृत्तियों, भावनाओं, मनोवृतियों, आचरण के साथ-साथ, उसके द्वारा भौतिक पदार्थों को विशिष्ट स्वरूप दिए जाने में अभिव्यक्त होती है ।" [3] भारतीय संस्कृति ज्ञान, आस्था, रीति-रिवाज, कला और जीवन शैली का एक अद्भुत संगम है। भारतीय संस्कृति को विश्व की सबसे प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक माना जाता है । "भारत की एकता का आधार संस्कृति है । भारत के उल्लास, आनन्द और सह-अस्तित्व का आधार भी संस्कृति है । हम सबके प्रति प्रेम और सम्बन्धों के प्रवाह भि सांस्कृतिक है । भारत के राष्ट्र रूप में बने रहने के कारण भी संस्कृति है । भारत की दुर्गति और अवनति का कारण सांस्कृतिक प्रवाह की मद्धिम गति है । ऋग्वैदिक समाज का गठन और विकास का एक परिपूर्ण सांस्कृतिक वातावरण में ही सम्भव हुआ । यजुर्वेद का समय और समाज अन्य देशों की भांति ऋग्वैदिक सांस्कृतिक वातावरण का विस्तार है।" [4] भारत के सांस्कृतिक इतिहास को मुख्यतः तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है- प्राचीन, मध्यकालीन तथा वर्तमान । किन्तु यह स्मरण रखना अपरिहार्य है कि भारतीय इतिहास के इन तीन काल खंडों का समय की दृष्टि से यूरोपीय काल खंडों से मिलान नहीं होता । भारत का प्राचीन इतिहास 5000 ई. पू. में प्रारम्भ हुआ और 10वीं शताब्दी के अंत तक चलता रहा । वाबजूद इसके इसका प्रभाव वर्तमान में भी परिलक्षित होता है।

भारतीय समाज और ज्ञान प्रणाली में संस्कृति की महत्ता को रेखांकित करते हुए डॉ. ह्रदय नारायण दीक्षित अपनी पुस्तक में लिखते हैं कि- "भारतीय जनजीवन का हर पक्ष संस्कृति से सम्बन्धित है । संस्कृति

ही व्यक्ति को बाहर और भीतर से संचालित करती है । व्यक्ति की सांस्कृतिक चेतना उस के आचरण और व्यवहार को नियंत्रित करती है । व्यक्ति की विचारधारा बदलने से उसका सांस्कृतिक पक्ष नहीं बदलता । हजारों साल पुरानी संस्कृति हर भारतीय की चेतना का वह तन्तु है जिससे उसका व्यक्तित्व निर्मित होता है ।" [5]

तथापि भारतीय ज्ञान परम्परा में संस्कार और धर्म का विशेष योगदान रहा है । जन्म से मृत्यु तक के सोलह संस्कार, धर्म के चार पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष संस्कृति के आधार स्तम्भ रहे हैं। भारतीय जीवन में सोलह संस्कार न केवल व्यक्ति के जीवन से लेकर मृत्यु तक के क्रियाकलापों का वर्णन करते हैं अपितु भारतीय जनमानस की लोकपरम्परा, लोकाचार, रीति-रिवाजों और परम्पराओं को भी परिलक्षित करते हैं जिसके माध्यम से व्यावहारिक दृष्टि से भारतीय जनमानस में संचित ज्ञान परम्परा का अवलोकन किया जा सकता है। इसके साथ-साथ कला और स्थापत्य कला उदाहरणतः भरतनाट्यम, कथक, हिंदुस्तानी संगीत, चित्रकला और वास्तुकला (मंदिर, स्तूप) आदि भारतीय संस्कृति की धरोहर हैं। विवेच्य कलाएँ भारत की समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर हैं जिसमें भारत की समृद्ध ज्ञान प्रणाली प्रस्फुटित होती है। कला एवं स्थापत्य कला के अतिरिक्त भारतीय जनमानस में व्याप्त विविध प्रकार के उत्सव और परंपराएँ सामाजिक एकता, भक्ति और सांस्कृतिक पहचान को सशक्त करते हैं।

निष्कर्ष:

अन्ततोगत्वा उपर्युक्त विवरण का सम्यक अवलोकन करने के उपरांत निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि यदि भारतीय ज्ञान परम्परा के व्यवहारिक पक्ष को देखना हो तो दर्शन, साहित्य और संस्कृति से उपयुक्त अन्यत्र कोई साधन नहीं है। भारतीय ज्ञान परंपरा में दर्शन ने हमें सोचने की गहराई दी, साहित्य ने भावनाओं और विचारों को अभिव्यक्ति दी और संस्कृति ने उसे जीवन में ढालने का मार्ग प्रशस्त किया। इन तीनों का समन्वय ही भारतीय सभ्यता की विशिष्टता और शाश्वतता का आधार है।

संदर्भ सूची:

1. शर्मा, डॉ. विवेक, पुराणों का भौगोलिक संदर्भ, देवयानी पब्लिशर्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2024, पृ. 24
2. सम्पादक, शर्मा सरोज, भारतीय ज्ञान परम्परा विविध आयाम, शिप्रा पब्लिकेशन, दिल्ली, 2025, पृ. 02
3. द्विवेदी, डॉ. कपिल, वैदिक साहित्य एवं संस्कृति, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, नवम संस्करण 2024, पृ. 352
4. शर्मा, डॉ. विवेक, विमर्श का केन्द्र: महाभारत, अर्नव पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2025, पृ. 57
5. अवस्थी, मोहन, हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास, पृ.156
6. शर्मा, डॉ. विवेक, पुराणों का भौगोलिक संदर्भ, देवयानी पब्लिशर्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2024, पृ. 96
7. शुक्ल, दुर्गा शंकर, भारत की राष्ट्रीय संस्कृति, नेशनल बुक ट्रस्ट, भारत, प्रथम संस्करण 1987, पृ. 03
8. दीक्षित, हृदय नारायण, भारतीय संस्कृति की भूमिका, विश्वविद्यालय प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2008, पृ. 17
9. शर्मा, डॉ. विवेक, विमर्श का केन्द्र: महाभारत, अर्नव पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2025, पृ. 117
10. वहीं, पृ. 18